RESEARCH PAPER

RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
e-ISSN: 2455-3085 | Vol.07 | No.03 | March 2022 | pp. 97-100
Double-Blind Peer Reviewed/Refereed Journal

Contemporary perception of Narendra Kohli in the context of Ram Katha and Krishna Katha: General Analysis

रामकथा एवं कृष्णकथा के संदर्भ में नरेन्द्र कोहली का समकालीन बोधः सामान्य विश्लेषण

*Jitendra Singh

Research Scholar

Abstract

The existence of the creator is attracted, repelled or influenced in many dimensions by the triangles of character, time and country and as a result the 'self-conscious' sensibility of the creator has to face the shocks or pressures of ambushes and is filled with reactions of the individual. He tries to recognize his time, place or country or the characters due to which his senses are shaken in the true sense, so he suffers internal and external suffocation on many levels. It is expected from the contemporary work that it should not deny the demands of Yugbodh, but should ruthlessly analyze inhuman situations, persons, demonic forces and play its active role in destroying the Ravana Empire. Thus, contemporaneity is not merely the realization of the fall or participation in the fall, but the contemporaneity in the rise and active struggle against vested interests.

Keywords: *Ram Katha, Krishna Katha, Contemporary, Yugbodh*

Abstract in Hindi Language:

रचनाकार का अस्तित्व पात्र, काल और देश के त्रिकोणों से कई आयामों में आकर्षित, विकर्षित अथवा प्रभावित होता है और इसके परिणामस्वरूप रचनाकार की 'स्वचेतन' संवेदनशीलता को घात–प्रतिघातों के झटकों या दबावों का सामना करना पड़ता है और व्यक्तिमन प्रतिक्रिया से भर उठता है। वह अपने काल, स्थान अथवा देश को या कि जिन पात्रों के कारण उसकी संवेदना झकझोरी जाती है उन्हें सही अर्थों में पहचानने की चेष्टा करता है अतः कई स्तरों पर आंतरिक और बाह्य घुटन को वह झेलता है। समकालीन रचना से यह अपेक्षा की जाती है कि वह युगबोध के तकाजे को नकारे नहीं, अपितु अमानवीय स्थितियों, व्यक्तियों, दानवी शक्तियों का निर्मम विश्लेषण करे और रावणी साम्राज्य को ध्वस्त करने में अपनी सक्रिय भूमिका निर्वाहित करे। इस प्रकार समकालीनता मात्र पतन का साक्षात्कार या पतन में भागीदारी नहीं है, बल्कि निहित स्वार्थों के विरूद्ध उठ खड़े होने और सक्रिय संघर्ष में समकालीनता है।

Keywords: *रामकथा, कृष्णकथा, समकालीनता, युगबोध।*

Article Publication

Published Online: 23-Mar-2022

***Author's Correspondence**

Jitendra Singh

Research Scholar

jitendrasingh72009@gmail.com

10.31305/rrijm.2022.v07.i03.016

© 2022 The Authors. Published by RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary. This is an open access article under the CC BY-NC-ND license (https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)

शोध विस्तारः–

जिन समकालीन परिस्थितियों ने सन् 1975 में नरेन्द्र कोहली को रामकथा लिखने के लिए बाध्य किया वह देश, काल, वातावरण उन्ह हीं के शब्दों में निम्नांकित है–''बंगला देश में क्रूर पाकिस्तानी सेनाएँ अबाध अत्याचार कर रही थी। जनसमान्य अन्यायी हिंसक पशुओं के जबड़ों में पिस रहा था–बुद्धिजीवियों को चुन–चुन कर मारा जा रहा था। समाचार आ रहे थे कि अमेरिका की सेंट्रल इंटेलिजेंस एजेन्सी ने उन बुद्धिजीवियों की तालिकाएँ बना–बनाकर पाकिस्तानी सेना को भेजी थी।''[1]

प्रत्येक संवेदनशील मस्तिष्क हिल्लोलित हो उठा था–आखिर यह सब क्या है? क्यो है? मेरे मन में भी अनेक प्रश्न थे–विरोध, आक्रोश, सहानुभूति, घृणा, पीड़ा और अनेक प्रकार के भाव–मस्तिष्क सोचता था, कुछ बुनता था। बार–बार मेरे मन में रामकथा जीवंत हो उठती थी। बंगला देश कहाँ है ? वह सिद्धाश्रम में भी हो सकता है, चित्रकूट में भी और जनस्थान में भी पाकिस्तान तब नहीं था, किन्तु राक्षस तो थे। वे जनसामान्य, अबोध प्रजा का रक्त पी रहे थे, उनकी हड्डियाँ चबा रहे थे। बुद्धिजीवी ऋषि नेतृत्व देने के लिए आये तो अमेरिका के समान रावण भयभीत हो उठा। यदि पिछड़ी हुई जातियों को बुद्धिजीवियों

का नेतृत्व मिल तो फिर रावण किसका रक्त पियेगा ? उसने बुद्धिजीवियों की हत्याओं के लिए राक्षसों को प्रेरित किया। राक्षसों से ऋषि जूझे, जनसामान्य जूझा, वानर तथा यज्ञ जैसी पिछड़ी जातियाँ जूझी.....राम के नेतृत्व में।

और एक दिन समाचार पत्रों में पढ़ा कि बिहार के एक गाँव में तथाकथित कुलीन राजपूत पुत्रों ने हरिजन कुमारियों से आत्मसमर्पण चाहा। उनकी अस्वीकृति पर उनकी झोपड़ियों में आग लगा दी गयी, पुरूषों को जीवित जला दिया गया और उसी अग्नि में तपाकर लौहशलाकाओं से उन हरिजन स्त्रियों के गुप्तांगों पर उनकी जाति चिन्हित की गयी। यह वहीं बिहार था जहां सीरध्वज जनक का राज्य था। सिद्धाश्रम के आसपास होने वाले अत्याचारों का स्वरूप मेरे मन में स्पष्ट होने लगा।[2]

कह नहीं सकता कि मात्र संयोग था या मेरी मानसिक प्रक्रिया ही अनुकूल हो गयी थी कि मुझे देश में घटित अनेक घटनाओं का रामकथा की घटनाओं के साथ तालमेल बैठता दिखाई पड़ने लगा। अपने समाज में छिपे राक्षस मेरे सामने प्रकट होने लगे। उनके पास शारीरिक शक्ति थी, क्रूर मस्तिष्क था, अमानवीय मूल्य थे, अमर्यादित धन था और इन उपकरणों के माध्यम से उन्होंने राजसत्ता को निस्तेज बना रखा था। ऋषियों का स्वरूप स्पष्ट हुआ । वे उच्च मानवीय मूल्यों का चिंतन कर रहे थे, किन्तु कर्म के साधन उनके पास नहीं था। निष्क्रिय चिंतन से अपना रक्त जला रहे थे और साधारण जनता थी जो उचित नेतृत्व के अभाव में अपना आत्मविश्वास खो बैठी थी और राक्षसों से त्रस्त–आतंकित थी।

मेरा उपन्यासकार मन रामकथा की घटनाओं की छान–बीन, खोज–परख करता रहा। प्रचलित रामकथा के और विशेषकर रामचरितमानस की कथानक संबंधी तर्कशून्यता ने मुझे बहुत उकसाया। रामजन्म की पृष्टभूमि की सारी घटनाएँ मेरे लिए उपेक्षणीय थी, उनमें से किसी में भी तर्कसंगतता के लिए तनिक भी अवकाश नहीं था। वैसे भी मेरा लक्ष्य अवतार के कारणों का वर्णन न होकर अन्याय का विरोध करना था। अन्याय का विरोध आरंभ होता है विश्वामित्र के सिद्धाश्रम से। किन्तु विश्वामित्र का सारा प्रसंग रामकथा में अस्पष्ट है। सिद्धाश्रम के निकट राक्षस क्या कर रहे थे ? उनके अत्याचारों का स्परूप क्या था, वे विश्वामित्र को परेशान भर ही क्यो करते थे ? उनकी हत्या क्यों नहीं करते थे ? विश्वामित्र राक्षसों के दमन में समर्थ थे अथवा नहीं ? यदि समर्थ थे तो उनका दमन क्यों नहीं रहे थे ? राक्षसों के संहार के लिए विश्वामित्र ने राम को ही क्यों चुना ? राम की वह कौनसी पृष्ठभूमि थी कि जिसके कारण वे विश्वामित्र की सहायता के लिए चल पड़े ? उनकी सक्षमता का स्वरूप क्या था ?[3]

प्रश्न यहीं समाप्त नहीं हो जाते। ताड़का–वध के पश्चात विश्वामित्र राम को अयोध्या लौटा लाने के स्थान पर जनकपुर क्यों ले गये ? मार्ग में उन्हें अहल्या के आश्रम पर क्यों ले गये ? शापवश अहल्या के पत्थर हो जाने और राम के चरणों की धूलि से पुनः नारी बन जाने की बात को भक्त लोग चाहें तो आध्यात्मिक चमत्कार निःसंदेह मान लें, किन्तु तर्कसंगत कथानक की दृष्टि से मुझे सर्वथा अमान्य है। ऐसी स्थिति में मेरी जिज्ञासा थी कि अहल्या के शिला हो जाने का अर्थ क्या था ? और उस तथाकथित शिला को पुनः जीवंत करने में राम का योगदान कैसा था ? रामकथा से स्वतंत्र, अहल्या की अपनी कथा भी पर्याप्त प्रश्न लिए हुए है। अहल्या–इन्द्र प्रसंग में अहल्या का कितना दोष था ? अहल्या व्यभिचारिणी थी अथवा सती ? यदि वह सती थी तो गौतम द्वारा शापित होने पर अहल्या शाप–मुक्त होने पर गौतम के पास जाने को क्यों उत्सुक थी ? और यदि अहल्या व्यभिचारिणी थी तो गौतम अपने नये आश्रम में उसकी प्रतीक्षा क्यों कर रहे थे ?

सीता–प्रसंग को लेकर कदाचित सब से अधिक प्रश्न उठे थे। सीता सीरध्वज की पुत्री नहीं थी तो वह किसकी आत्मजा थी ? उसे क्यों त्यागा गया ? सीरध्वज ने उसे क्यों ग्रहण किया ? सीतास्वयंवर के लिए ऐसी विकट शर्त क्यो रखी गयी ? शिव धनुष्य क्या था ? वह राम के द्वारा ही क्यों परिचालित हुआ ? सीता का राम के प्रति क्या दृष्टिकोण था ?

एक महत्वपूर्ण बात और थी राम का चरित्र। अनेक विद्वानों ने इस चरित्र की विभिन्न संभावनाओं को देखने से इन्कार कर उसे एक आदर्श जड़ चरित्र घोषित किया था। और मैंने अपने शैशव से राम को एक अत्यंज सहज मानवीय चरित्र के रूप में देखा था। मेरे मन के राम ने मुझे सदा एक जनवादी, समता तथा न्याय पर आधृत चेतना दी थी। सामंती और पूँजीवादी चेतनाओं के सर्वथा विरूद्ध राम मुझे सदा जनवादी नैतिकता के ध्वजवाहक दिखे थे। अहल्या के चरण छूनेवाले, अज्ञातकुलशीला सीता से विवाह करने वाले, निषाद को गले लगाने वाले, शबरी के झूठे बेर खाने वाले, वानर–भालू जैसी पिछड़ी हुई आदिम जातियों को गले लगाकर उन्हें अपने भाइयों के समान मानकर, उन्हें अपने भाईयों के समान मानकर, उन्हें शून्य से उठाकर पूँजीवादी, साम्राज्यवादी राक्षस के सम्मुख खड़ा कर उसे पराजित कर देने वाले राम जाति, संप्रदाय तथा अध्यात्म श्रृंखलाओं में बँधे देख पीड़ा का ही अनुभव हुआ था।[4]

ये तथा ऐसे ही अनेक अन्य प्रश्न मुझे रामकथा लिखने को बार–बार उकसा रहे थे। मुझे इन प्रश्नों के समाधान प्रस्तुत करने थे, किन्तु उनके लिए तर्क और प्रमाणों का भवन रामायण के संकेतों की नींव पर ही खड़ा करना था। कथा का प्रख्यात

रूप मुझे बांध रहा था और मेरे अपने देश–काल की घटनाएँ अपना प्रतिबिंब खोज रही थी। और मैं यह देख देखकर चकित था कि इस प्राचीन प्रख्यात कथा तथा समकालीन मनः स्थिति में कितना अद्‌भुत बिंब प्रतिबिंब भाव था। अतः मेरे सम्मुख रामकथा लिखने के सिवाय अन्य कोई मार्ग नहीं था।[5]

प्रश्न उठाया जा सकता है कि यदि कोई महाभारत की कथा पढ़ना चाहे तो वह व्यासकृत मूल महाभारत क्यों न पढ़े ? नरेन्द्र कोहली का उपन्यास क्यों पढ़े ? प्रश्न यह भी उठाया जा सकता है कि उपन्यास ही पढ़ना है तो समसामयिक सामाजिक उपन्यास क्यों न पढ़ाया जाय ? नरेन्द्र कोहली का 'महासमर' क्यों पढ़ा जाए ? इस प्रश्न का उत्तर नरेन्द्र कोहली के 'बंधन' के आमुख में प्राप्त होता है।

''प्रख्यात कथाओं का पुनः सृजन उन कथाओं का संशोधन अथवा पुनर्लेखन नहीं होता, वह उनका युगसापेक्ष अनुकूलन मात्र भी नहीं होता। पीपल के बीज से उत्पन्न प्रत्येक वृक्ष पीपल होते हुए भी स्वयं में ऐ स्वतंत्र अस्तित्व होता है, वह न किसी का अनुकरण है न किसी का नया संस्करण। मौलिक उपन्यास उपन्यास का भी यही सत्य है।''[6]

मानवता के शाश्वत प्रश्नों का साक्षात्कार लेखक अपने गली–मुहल्ले, नगर–देश, समाचार पत्रों तथा समकालीन इतिहास में आबद्ध होकर भी करता है। और मानव सभ्यता तथा संस्कृति की संपूर्ण जातीय स्मृति के सम्मुख बैठकर भी। पौराणिक उपन्यासकार के प्राचीन में घिरकर प्रगति के प्रति अंधे हो जाने की संभावना उतनी ही घातक है, जितनी समकालीन लेखन की संकीर्ण समसामयिक पत्रकारिता में बंदी को खण्ड–खण्ड सत्य को पूर्ण सत्य मानने की मूढ़ता। सर्जक साहित्यकार का सत्य कालखण्ड का अंग होते हुए भी खण्डों के अतिक्रमण का लक्ष्य लेकर चलता है।''[7]

''महाभारत हमारा काव्य भी है, इतिहास भी है और अध्यात्म भी। हमारे प्राचीन ग्रन्थ शाश्वत सत्य की चर्चा करते है। वे किसी कालखण्ड के सीमित सत्य में आबद्ध नहीं है। नरेन्द्र कोहली ने न महाभारत को नये संदर्भों में लिखा है, न संशोधन करने का कोई दावा है, न वे पाठक को महाभारत समझाने के लिए उसकी व्याख्या मात्र कर रहे है। वे यह नहीं मानते कि महाभारत की यात्रा खण्डों में विभाजित है, इसलिए जो घटनाएँ घटित हो चुकी, उनसे अब हमारा कोई संबंध नहीं है। सत्य तो यह है कि न तो प्रकृति के नियम बदले हैं, न मनुष्य का मनोविज्ञान मनुष्य की अखण्ड कालयात्रा को कोई खण्डों में बाँटे तो बाँटे, साहित्य उन्हें विभाजित नहीं करता, यद्यपि ऊपरी आवरण सदा ही बदलते रहते है।

''महाभारत की कथा भारतीय चिंतन और भारतीय संस्कृति की अमूल्य थाती है। नरेन्द्र कोहली ने उसे ही अपने उपन्यास का आधार बनाया है। 'महासमर' की कथा मनुष्य के उस अनवरत युद्ध की कथा है जो उसे अपने बाहरी और भीतरी शत्रुओं के साथ निरंतर करना पड़ता है। वह उस संसार में रहता है जिसमें चारों ओर लोभ और स्वार्थ की शक्तियाँ संघर्षरत है। बाहर से अधिक उसे अपने भीतर से लड़ना पड़ता है। परायों से अधिक उसे अपनों से लड़ना पड़ता है।''[8]

आचार्य विष्णुकांत शास्त्री का मत है कि ''प्रसिद्ध उपन्यासकार नरेन्द्र कोहली ने रामकथा के यशस्वी समकालीन चित्रण के अनंतर महाभारत की औपन्यासिक पुनः सृष्टि करते समय भी अपने उत्तरदायित्व का गंभीरतापूर्वक निर्वाह करने का प्रशसंनीय प्रयास किया है। महाभारत सामान्य काव्य नहीं, बल्कि संपूर्ण भारतीय संस्कृति का विश्वकोश है। उस पर कलम चलाते समय दायित्वबोध संपन्न स्रष्टा को एक साथ दो चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। वह प्राचीन को अपनी इच्छा और सुविधा के अनुसर न तो बदल सकता है और न उसे उद्धत चित्रित कर अपने विवेक और समकालीन बोध को संतुष्ट ही कर सकता है। उसे पुरानी प्रामाणिकता को बनाये रखकर नयी व्याख्यायों के द्वारा उसी सर्वकालीनता को आधुनिक संदर्भों में उजागर करने का दुरूह कार्य करना पड़ा है। हमें इस बात का संतोष है कि नरेन्द्र कोहली एक बड़ी सीमा तक अपने इस गहन पुनः सृष्टिपरक यज्ञ में सफल हो पाये है।''[9]

निष्कर्षः–

उपर्युक्त विमर्श के आधार पर कहा जा सकता है कि नरेन्द्र कोहली समकालीन उपन्यासकारों में पहली पंक्ति के उपन्यासकार है। अनेक उद्धरणों से यह स्पष्ट हो गया है कि उनकी प्रतिभा, सामर्थ्य, सृजनशील कल्पना, संतुलित जीवनदृष्टि, सामाजिक प्रतिबद्धता, प्रगतिशील दृष्टिकोण, मानवीय सरोकार और अकंप जीवननिष्ठा का इतना सुंदर समन्वय है कि उनका प्रत्येक उपन्यास जीवन का कर्म बनकर उभरा है। वस्तु और शिल्प दोनों स्तरों पर वे एक उत्कृष्ट उपन्यासकार सिद्ध होते है। उनके उपन्यासों में निहित जीवनसंपृक्ति और जनकल्याण भावना चुंबकीय आकर्षण से मंडित है। यही कारण है कि स्वातंत्र्योतर काल से चले आ रहे उपन्यास के लंबे दौर में नरेन्द्र कोहली सदा ही विशिष्ट बने रहे। उनकी रचना ऊर्जा हमेशा तरोताजा बनी रही। विभिन्न कालखण्डों में लिखे गये उनके रामकथा और कृष्णकथा पर आधारित उपन्यासों में समकालीन जीवनबोध सर्वथा नूतन

प्रकाश लेकर आया है। यहीं कारण है कि 'महासमर' पढ़ते हुए यह महसूस होता है कि यह तो हमारें रोजमर्रा के जीवन का महासमर है जो हमारें आस–पास नित्य ही धटित होता रहता है।

अनेक सीमक्षकों ने उनके कथागत रचनात्मक उपलब्धियों की भूरि–भूरि प्रशंसा की है। नरेन्द्र कोहली न केवल एक सफल उपन्यासकार है, बल्कि अपने समकालीनों में वे सदैव अनुकरणीय रहे है और उपन्यासलेखन के क्षेत्र में स्वस्थ नेतृत्व प्रदान करते रहे है। हर समय उनकी रचनाओं को पढ़ते हुए यहीं महसूस होता है यह तो हमारी ही काहनी है। हमारा ही युद्ध है जो हमारे आस–पास घटित हो रहा है।

संदर्भः–

डॉ. किरणबाला, समकालीन हिन्दी कहानी और समाजवादी चेतना, पृ. 12

डॉ. पुष्पपाल सिंह, समकालीन कहानी–युगबोध का संदर्भ, पृ. 97

नरेन्द्र कोहली, दीक्षा–आधार भूमि, पृ. 3

उपर्युक्त पृ. 79

नरेन्द्र कोहली, महासमर–1 बंधन, आमुख लेख।

डॉ. पुष्पपाल सिंह, समकालीन कहानी–युगबोध का संदर्भ, पृ. 99

कार्तिकेय कोहली, नरेन्द्र मोहन के विषय में, पृ. 29

कार्तिकेय कोहली, नरेन्द्र मोहन के विषय में, पृ. 30

डॉ. रामस्वरूप चर्तुवेदी, हिन्दी नवलेखन, पृ. 19